HANS SHODH SUDHA, Vol. 1, Issue 2, (2020), pp. 11 - 15

उच्च शिक्षा में शोध : दशा और दिशा

डॉ. तरुण

शिवाजी कॉलेज

(दिल्ली विश्वविद्यालय)

Email id of Corresponding author: **dr.tarundu@gmail.com**

सार

आज तकनीक समाज में बदलाव लाने का सिर्फ दावा ही प्रस्तुत नहीं कर रही बल्कि समाज में तकनीकगत विकास परिलक्षित होने लगा है। समाज में जब भी परिवर्तन आया है यह शिक्षा की मार्फत ही आया है। अच्छी शिक्षा अच्छे कौशल और तकनीक की जन्मदात्री होती है। भारत में शिक्षा को प्राथमिक, माध्यमिक और उच्चतर माध्यमिक तथा उच्च शिक्षा के विभाजन के साथ समझा जाता है। हमारा सरोकार इस लेख में उच्च शिक्षा में शोध की भूमिका और उसके भविष्य से संबंधित है। उच्च शिक्षा और शोध किसी राष्ट्र के विकास और प्रगति की रीढ़ होते हैं। यह अनायास नहीं है कि दुनिया के सभी विकसित राष्ट्रों में उच्च शिक्षा को लेकर सरकारें और नियामक संस्थाएं अत्यंत सजग हैं। दुर्भाग्य से भारत में उच्च शिक्षा की नियामक एजेंसी विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (यूजीसी) और विभिन्न सरकारों का रवैया उच्च शिक्षा को लेकर बहुत उत्साहजनक नहीं रहा है। वास्तव में भारत में उच्च शिक्षा प्रणाली की वर्तमान स्थिति जटिल और चुनौतीपूर्ण है। इसमें कोई दो राय नहीं है कि स्वतंत्र भारत में उच्च शिक्षा का विस्तार व्यापक स्तर पर हुआ है लेकिन क्या यह हमारे देश की उच्च शिक्षा, छात्रों को जीवन दृष्टि देने में या उनकी भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति करने में सफल हुयी है। हमारी शिक्षा व्यवस्था की चतुर्दिक समस्याओं में से उच्च शिक्षा की समस्या की तह में जाना ज्यादा जरूरी है, क्योंकि उच्च शिक्षा किसी देश के आर्थिक विकास की आधारशिला होती है।

शिक्षा किसी राष्ट्र अथवा समाज की प्रगति का मापदंड है । जो राष्ट्र शिक्षा को जितना अधिक प्रोत्साहन देता है वह उतना ही विकसित होता है । किसी भी राष्ट्र की शिक्षा नीति इस पर निर्भर करती है कि वह राष्ट्र अपने नागरिकों में किस प्रकार की मानसिक अथवा बौदधिक जागृति लाना चाहता है ।

इसी नीति के अनुसार वह अनेक सुधारों और योजनाओं को कार्यान्वित करने का प्रयास करता है जिससे भावी पीढ़ी को लक्ष्य के अनुसार मानसिक एवं बौद्धिक रूप से तैयार किया जा सके ।

उच्च शिक्षा में शोध की भूमिका सबसे महत्त्वपूर्ण होती है लेकिन दुखद यह है कि भारत में

शिक्षण और शोध को साथ साथ करना बेहद दुष्कर बनता जा रहा है। जबकि शोध करते हुए शिक्षण के एवं शिक्षा देते हुए शोध की नई प्रविधियाँ विकसित होती हैं। संभवतः इसी वजह से हम वैश्विक स्तर पर पुरस्कार ग्रहण करने में काफी पिछड़े हुए हैं। अमेरिका में शोध पर काफी रूपया खर्च होता है, और सिर्फ अमेरिका ही क्यों यूरोप के अधिकतर देशों में यहाँ तक कि चीन, जापान और कोरिया में भी शोध को लेकर जो नज़रिया है वो हमारे यहाँ नहीं है। यहाँ सरकार कॉरपोरेट के लिए लोन देने में जितनी उत्सुकता दिखाती हैं वैसी स्कॉलरशिप या फैलोशिप देने में नहीं, अब हाल तो यह हो गया है कि छात्रवत्ति की दर लगातार कम की जा रही है। विश्वविद्यालयों का बजट निरंतर घटता चला जा रहा है। जिस शिक्षा पर सकल घरेलू उत्पाद का तकरीबन 6 प्रतिशत खर्च होना चाहिए था वहाँ यह लगभग 2 से 2.5 प्रतिशत के करीब है। इसे बढ़ाने को लेकर कोई तत्परता या उत्सुकता नहीं दिखती ऐसे समय में हम उच्च शिक्षा में शोध की भूमिका पर बात कर रहे हैं जब उच्च शिक्षा को लेकर सरकार का नज़रिया बहुत सकारात्मक दिखाई नहीं देता। भारत के अधिकतर विश्वविद्यालय के छात्र फीस वद्धि एवं समय परीक्षा न होने और रिज़ल्ट देर से आने के लिए धरने दे रहे हैं। राष्ट्रवाद की नई बयार चली हैं और कहना न होगा कि हर व्यक्ति अपने अपने राष्ट्रवाद के डंडे से शिक्षा नीति और शिक्षण कर्म को हाँकना चाह रहा है। दुखद यह है कि इसकी सबसे ज्यादा मार उच्च शिक्षा पर ही पड़ रही है। एक आँकड़ा देखें कि भारत में जीडीपी का मात्र 0.8 प्रतिशत ही शोध पर खर्च किया जाता है। जो चीन यहाँ तक कि कोरिया से भी काफी कम है। क्या हम इस तरह से विश्वगुरू बनने का ख्वाब देख रहे हैं। उच्च शिक्षा को हाशिये पर धकेल कर क्या कोई देश विश्वगुरू बन सकता है। कौन समझाए कि विश्वविद्यालय सोचने, समझने और आलोचना के गढ़ होते हैं। और अगर आप गौर करें तो यह बात शोध पर भी उतनी ही लागू होती है। अगर आप उपरोक्त वाक्य में से विश्वविद्यालय हटाकर शोध रख दें तो कोई बहुत फर्क नहीं पड़ेगा।

अगर आप को शोध की भूमिका को समझना हो तो आप विश्वविद्यालय में छात्र शिक्षक अनुपात, स्थायी शिक्षकों और गैर स्थायी(तदर्थ, अतिथि, कॉन्ट्रैक्चुअल) शिक्षकों के अनुपात से भी समझ सकते हैं। अगर हम केवन दिल्ली विश्वविद्यालय का ही संदर्भ लें तो देखते हैं वहाँ गैर स्थायी शिक्षकों की औसत आयु 40 से 45 वर्ष है ऐसे में वो अपनी गुणवत्ता एवं रचनात्मकता इसी उधेड़बुन में खर्च कर देते हैं कि कब वे स्थायी होंगे। जो उत्साह और अनुसंधान की ललक उनमें होती है वो नौकरी की चाह और पारिवारिक उलझनों का शिकार हो जाती है। जब विश्वविद्यालय अपनी क्रीम(मेधावी शोधार्थियों) को ही नहीं जज्ब कर पा रहा तब ये उच्च शिक्षा में शोध की भूमिका को समझना कोई बहुत मुश्किल काम नहीं है।

उच्च शिक्षा क्या है

स्नातक एवं उसके बाद की शिक्षा को उच्च शिक्षा के दायरे में रखा जाता है। बारहवीं कक्षा के बाद से ही एक छात्र का खोजी दिमाग अपने विवेक का प्रयोग कर रचनात्मकता की ओर अग्रसर होता है। जिसमें उसके शिक्षक उसकी संगत और पारिवारिक एवं सामाजिक माहौल मुख्य भूमिका निभाते हैं।

हमें पहले यह तय करना होगा की हम ऐसे

छात्र को कैसा समाज दे रहे हैं। निश्चित अगर उपरोक्त में से उसे कोई भी दिक्कत है तब ऐसे में उसका खोजी मस्तिष्क भी भटक सकता है। परिस्थितियों को झेलते हुए उसका विवेक मर सकता है। सोचने, समझने और उसकी आलोचनादृष्टि का ह्रास हो सकता है। अगर हम इन्हें नहीं बचा सकते तो भी उच्च शिक्षा में शोध की भूमिका जैसा सवाल करना बेमानी सा प्रतीत होता है।

उच्च शिक्षा में शोध : बाधाएँ और समाधान

पहली और मुख्य बाधा तो फंड की है, अगर बजट इसी तरह घटता रहा तो माफ कीजिए ऐसी स्थिति में कोई ए.पी.जे अब्दुल कलाम भी अपने शोध को सुचारू रूप से नहीं चला पाएगा। उल्लेखनीय है कि पिछले 10 वर्षों के दौरान उच्च शिक्षा पर केंद्र सरकार का व्यय लगभग स्थिर रहा है जोकि उसके कुल व्यय का लगभग 1-1.5% है। [1] हालांकि विभिन्न समितियों ने माना कि उच्च शिक्षा में निजी क्षेत्र के निवेश करने से इस व्यय को बढ़ाने में मदद मिलेगी, लेकिन उच्च शिक्षा पर निजी क्षेत्र के व्यय से संबंधित आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं। वर्तमान में भारत अपनी जीडीपी का 1% हिस्सा उच्च शिक्षा पर व्यय करता है। इसके विपरीत अमेरिका अपनी जीडीपी का 3% उच्च शिक्षा पर खर्च करता है। अन्य देशों की स्थिति इस प्रकार- कनाडा 2.5%, चिली 2%, रूस 1% और ब्राजील 0.5%। अमेरिका, चिली और कोरिया में उच्च शिक्षा पर निजी क्षेत्र के व्यय का उच्च अनुपात प्रदर्शित होता है (जीडीपी के 1.7% से 2.1% के बीच)।[2]

आज शिक्षा पर सकल घरेलू उत्पाद का जितना प्रतिशत खर्च होना चाहिए, वो नहीं हो पा रहा है। एक रपट के अनुसार, देश में शोध पर 0.8 फीसदी खर्च हो रहा है, जबकि कम-से-कम 2 फीसदी खर्च होना चाहिए। रक्षा और अन्य मंत्रालयों का बजट लम्बा-चौड़ा होता है, पर शिक्षा की अनदेखी होती है। 2019-20 के बजट में उच्च शिक्षा के लिए आवंटित राशि में 650 करोड़ की कटौती की गई है। [3] 1956 में संसद द्वारा एक कानून पास कर यूजीसी का गठन किया गया जिसका प्रमुख कार्य उच्च शिक्षा का समन्वय करना, इसके स्तर को बनाए रखना, विकास की निगरानी और उच्च शिक्षा को सुधारने के लिए केंद्र और राच्य सरकारों को सलाह देना था।

अच्छे शोध के लिए सिर्फ साध्य ही काफी नहीं उसके लिए साधन भी चाहिए होते हैं उनके बिना शोध करना हाथों से पहाड़ तोड़ने के समान है। ऐसे में सरकार को चाहिए कि वह जीडीपी में शिक्षा और शोध के लिए अलग से बजट का प्रावधान करे, बेहतर यह होगा कि शिक्षा और स्वास्थय जैसे बुनियादी विषयों से सरकार आज अर्जित करने का खयाल छोड़ दे। दरअसल इन्हें बजट से अनुदातित बजट के रूप में व्याख्यायित करना चाहिए यानि इन मदों में

[1] Demands for Grants of Department of Higher Education, Expenditure Budget, http://indiabudget.nic.in/index.asp.

[2] "Education at a Glance 2010", Organisation for Economic Cooperation and Development Indicators, 2010, http://www.oecd.org/education/skills-beyond-school/45926093.pdf.

[3] https://rashtriyahindimail.in/posts/36702

आप सिर्फ अनुदान दें। और उसका हिसाब रखें हो सके तो इसका बजट ही अलग कर दें।

भारत की बहुत सारी प्रतिभाएं अधिक आय और सम्मान के कारण बाहर के देशों का रुख करती हैं। उनका तर्क यही है कि भारत उनकी प्रतिभाओ का उचित सम्मान नहीं करता। काफी हद तक यह बात सच भी है आखिर ए.पी.जे अब्दुल कलाम जैसे विरले लोग कितने होते हैं। कुछ अपवादों को छोड़ दें तो सच्चाई यही है कि हम अपने शिक्षकों, डॉक्टरों और इंजीनियरों को उचित आय और सम्मान नहीं दे पा रहे। यही कारण है कि भारतीय मूल के लेखक, डॉक्टर, इंजीनियर, शिक्षक, आईटी प्रौफेशनल की पूरी दुनिया में मांग है। हम अपने देश की आलोचना नहीं कर रहे बल्कि आईना दिखाने का प्रयास कर रहे हैं एक अन्य अर्थ में हम आत्मालोचना कर रहे हैं। हमें स्वीकारना होगा कि क्या कारण है कि प्रतिभाओं का पलायन आज भी जारी है।

यह भी एक तथ्य है कि दुनिया में ऑक्सफोर्ड, कैम्ब्रिज, हार्वर्ड जैसे शिक्षा के बड़े केंद्र हैं वे अपने शोध के ऊंचे स्तर और शोधार्थियों की गुणवत्ता की वजह से ही जाने जाते हैं। अमर्त्य सेन (हार्वर्ड विश्वविद्यालय), जगदीश भगवती (कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय), हरगोविंद खुराना (लिवरपूल विश्वविद्यालय) ने अपने शोध की वजह से न केवल भारत का नाम रौशन किया बल्कि जिन विश्वविद्यालयों से ये जुड़े, उनकी प्रतिष्ठा को भी इन्होंने आगे बढ़ाया। क्या यह सच नहीं कि अगर हमने इन महानुभावों को उचित आय और बेहतर अवसर दिए होते तो ये विभूतियाँ हमारे देश के लिए काम कर रही होती।

"सम्पूर्ण देश में छात्र-शिक्षक अनुपात इतना असंतुलित है कि सोचकर ही स्थिति भयावह लगती है। आई.आई.टी . जैसे संस्थानों में 15-20 फीसदी शिक्षकों की कमी है। विभिन्न कॉलेज, विश्वविद्यालयों में प्राध्यापकों की भारी कमी है, हजारों की तादाद में रिक्तियां सालों से लंबित हैं। शिक्षण कार्य जैसे-तैसे घसीटा जा रहा है। राज्यों में स्थिति तो बहुत ज्यादा ही खराब है। यथाशीघ्र इन रिक्तियों को भरने की आवश्यकता है। इसके साथ-साथ नवीनतम ज्ञान शोध और तकनीक आदि से शिक्षकों के सतत आधुनिकीकरण के लिए एक कारगर नीति बनाई जाने की आवश्यकता है। देश के सभी प्रमुख विश्वविद्यालयों में तदर्थ व्यवस्था के तहत शिक्षकों की बहाली कर उनसे काम चलाया जा रहा है। कई राज्य-स्तरीय विश्वविद्यालय तो ऐसे हैं, जहां कई कॉलेजों में कई विभागों में एक भी शिक्षक नहीं है। अगर आंकड़ों की बात करें तो सन् 2030 तक महाविद्यालय जाने वाले विद्यार्थियों की संख्या भी लगभग 14 करोड़ से अधिक हो जायेगी तो इस क्षेत्र में ऐसी दूरगामी योजनाएं हों कि हम गुणवत्ता का स्तर बनाते हुए संसाधन जुटा सकें।"[4]

शोध के लिए ज़रूरी है कि हम एक माहौल तैयार करें जहाँ बाकि की चिंताएं मसलन नौकरी, गरीबी, भूख, कुपोषण आदि बाधा न बने। हमें चाहिए कि किताबों और समाज को एक दूसरे के पूरक के रूप में देखें मसलन उनमें बहुत झोल न हो, ऐसा न हो कि किताबों की

[4] https://rashtriyahindimail.in/posts/36702

बातें अलौकिक टाइप हों उसका समाज से कोई संबंध न हो। किताबों को परियो की कहानी होने से बचाने के लिए जरूरी है कि उनका अधिक से अधिक समाज और समाजशास्त्र के नज़रिये लेखन और पाठन हो। अर्थात एक शोध का नजरिया यह भी है कि किताब की बाते समाज में व्यक्ति के व्यवहार एवं संस्कारों का सार्थक क्रियांवयन करें।

बेहतर शोध के लिए ज़रूरी है कि एक शोधार्थी अपने दिमाग को सिर्फ किताबों में न खपाए बल्कि यह भी देखें कि उसने जो पढ़ा है वो अब के समाज में लागू भी होता है या नहीं। हो सकता है जब लिखा गया हो तब होता हो पर अब नहीं होता। यह समझना बहुत जरूरी है कि हमारे प्रयोगों का संबंध अधिक से अधिक वर्तमान और भविष्य को ध्यान में रखकर हो भूतकाल से हम सीखें देखें कि पहले किये गए प्रयोगों में कौन से पहलू छूट गए और तब निष्कर्ष पर पहुँचे अन्यथा निष्कर्षों भी प्रयोगों की तरह अधूरे एवं असफल हो जाएंगे।

बदलते सामाजिक और सांकृतिक परिदृश्य में आज शोध की गुणवत्ता को बढ़ाने की जरूरत है। इसके लिए क्लासरूम टीचिंग के साथ शिक्षण के अन्य प्रारूपों को भी अपनाने की जरूरत है। आज भारत के सामने अनेक चुनौतियां है। हमें इनके मुकाबले के लिए स्वयं को तैयार करना होगा तभी विश्व के साथ हम कदम मिलाकर चल पाएंगे।